सूत्रकृतांग में वर्णित कुछ ऋषियों की पहचान

डॉ० अरुणप्रताप सिंह

सूत्रकृतांग जैन अंग साहित्य का द्वितीय ग्रन्थ है। प्राचीनता एवं विषय के दृष्टिकोण से इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसका प्रथम श्रुतस्कन्ध आचारांग एवं ऋषिभाषित के समान प्राचीन है। सूत्रकृतांग में मुख्यतः दर्शन सम्बन्धी वर्णन है जिनमें जैन एवं जैनेतर–दोनों परम्परा के मतों का उल्लेख किया गया है। इन उल्लेखों से यह स्पष्ट होता है कि सूत्रकृतांगकार का मुख्य उद्देश्य अन्य मतों का खण्डन एवं जैन मत का मण्डन करना है। इसी संदर्भ में सूत्रकृतांगकार कुछ ऋषियों का उल्लेख करता है। इनमें नमि विदेही, रामपुत्त, बाहुक, नारायण, असित देवल, द्वैपायन एवं पाराशर मुख्य हैं।[1] इन ऋषियों के सम्बन्ध में यह कहा गया है कि इन्होंने सचित्त जल, हरे बीजों का सेवन करते हुए भी सिद्धि को प्राप्त किया था। इनका उल्लेख जैन धर्म से इतर ऋषियों के रूप में किया गया है क्योंकि जैन धर्म के सामान्य नियम के अनुसार इनका सेवन एक मुनि के लिए निषिद्ध है। फिर भी इन ऋषियों के लिए अनेक प्रशंसासूचक शब्दों का प्रयोग किया गया है। इनके लिए प्रयुक्त **महापुरुष, तपोधन, महर्षि, सिद्ध** आदि विशेषणों से इन ऋषियों की महत्ता एवं लोकप्रियता स्वतः स्पष्ट होती है।

यहाँ यह प्रश्न विचारणीय है कि ये ऋषि मात्र पौराणिक हैं या इनकी ऐतिहासिकता सिद्ध की जा सकती है। इनकी ऐतिहासिकता सिद्ध करने के लिए यह आवश्यक है कि इनका उल्लेख अन्य ग्रन्थों से भी प्राप्त हो। पूरे भारतीय साहित्य का अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि इन ऋषियों का उल्लेख न केवल सूत्रकृतांग एवं अन्य जैन ग्रन्थों में हुआ है अपितु वैदिक एवं बौद्ध साहित्य में भी इनका उल्लेख प्रचुरता से प्राप्त होता है।

भारतीय साहित्य में इन ऋषियों का उल्लेख, जहाँ तक मैं खोज कर सका हूँ, निम्न प्रकार से है—

---

१. आहंसु महापुरिसा पुव्वि तत्ततवोधणा।
उदएण सिद्धिमावन्ना तत्थ मंदो विसीयति॥
अभुंजिया नमी विदेही रामगुत्ते या भुंजिआ।
बाहुए उदगं भोज्जा तहा नारायणे रिसी॥
आसिले देवले चेव दीवायण महारिसी।
पारासरे दगं भोच्चा बीयाणि हरियाणि य॥
एते पुव्वं महापुरिसा आहिता इस संमता।
भोच्चा बीओदगं सिद्धा इति मेअमणुस्सुअ॥
सूत्रकृतांग, १/३/४/१-४ (सं० अमर मुनि, आत्मज्ञान पीठ, माणसा)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नमि विदेही—ऋषि नमि का उल्लेख सूत्रकृतांग के अतिरिक्त अन्य जैन ग्रन्थ, वैदिक तथा बौद्ध साहित्य में भी प्राप्त होता है। तीनों परम्पराओं में इन्हें विदेह, मैथिल और राजर्षि कहा गया है। बौद्ध धर्म के जातक साहित्य में नमि का उल्लेख प्रत्येक बुद्ध के रूप में किया गया है। जैन साहित्य के एक प्राचीन ग्रन्थ उत्तराध्ययन में भी नमि का उल्लेख प्रत्येक बुद्ध के रूप में हुआ है। इसमें नमि के त्याग का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि उन्होंने अपने सभी सम्बन्धियों एवं मिथिला नगरी को छोड़कर अभिनिष्क्रमण किया।[1] राजर्षि (रायरिसी) के रूप में प्रसिद्ध नमि को क्रोध, मान, माया, लोभ को वश में करने वाला कहा गया है।[2] नमि की शिक्षाओं का सार यह है कि मनुष्य को अपने अन्दर ही युद्ध करना चाहिए तथा पाँच इन्द्रियों, चार कषायों (क्रोध, मान, माया, लोभ) को जीतना चाहिए। अपने से अपने को जीतकर ही सच्चा सुख प्राप्त होता है।[3] वैदिक साहित्य के ग्रंथ महाभारत में नमि का उल्लेख उत्तराध्ययन के समान ही हुआ है। महाभारत में इन्हें "निमि" कहा गया है तथा इन्हें विदेह का अधिपति कहा गया है।[4] महाभारत में निमि का उल्लेख उन राजाओं एवं महात्माओं की श्रेणी में हुआ है जिन्होंने जीवन में कभी मांस का सेवन नहीं किया था।[5]

महाभारत में एक अन्य निमि का भी उल्लेख प्राप्त होता है। इन्हें महर्षि दत्तात्रेय का पुत्र कहा गया है।[6] परन्तु इनकी समता सूत्रकृतांग एवं उत्तराध्ययन में वर्णित नमि से नहीं की जा सकती। मिथिला नरेश के रूप में नमि तीनों परम्पराओं में मान्य हैं।

रामपुत्त—सूत्रकृतांग की कुछ प्रतियों में रामपुत्त का वर्णन रामगुत्त (रामगुप्त) के रूप में हुआ है। रामगुप्त प्रसिद्ध गुप्त सम्राट् समुद्रगुप्त का पुत्र तथा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य का अग्रज था। प्राप्त प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि यह एक जैन धर्मावलम्बी नरेश था। इसका शासन अत्यन्त अल्प था तथा अन्त अत्यन्त दुःखद। परन्तु यदि हम इसे रामपुत्त मानकर सिद्धि प्राप्त करने वाले अन्य ऋषियों की श्रेणी में रखते हैं तो हमारे सामने अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित हो जाती हैं। प्रथम तो यह कि सूत्रकृतांग को हमें चतुर्थ-पञ्चम शताब्दी में ले जाना पड़ेगा जो सम्भव नहीं है। अनेक प्रमाणों से यह सिद्ध हो चुका है कि सूत्रकृतांग का यह प्रथम श्रुतस्कन्ध जिसमें रामपुत्त का वर्णन है, आचारांग के समान ही प्राचीन है। इसके अतिरिक्त

---

१. मिहिलं सपुरजणवयं, बलमोरोहं च परियणं सव्वं
चिच्चा अभिनिक्खत्तो, एगन्तमहिट्ठिओ भगवं
उत्तराध्ययन, ९।४

२. वही, ९।५६

३. अप्पाणमेव अप्पाणं, जइत्ता सुहमेहए
दुज्जयं चेव अप्पाणं, सव्वं अप्पे जिए जियं
वही, ९।३५, ३६

४. महाभारत, आदिपर्व १।२३४

५. वही, अनुनासिक पर्व, ११५।६५

६. वही, अनुनासिक पर्व ९१।५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्राट् रामगुप्त के बारे में हमें जो जानकारी उपलब्ध है, उसमें उसे कहीं भी सिद्धि प्राप्त करने वाला नहीं बताया गया है। रामपुत्त को रामगुप्त मानने की त्रुटि या तो भूलवश या अक्षरों के ज्ञान के अभाव में हो गई प्रतीत होती है।

सूत्रकृतांग में जिस रामपुत्त का वर्णन है, वह सम्राट् नहीं वरन् अर्हत् ऋषि रामपुत्त है। रामपुत्त के बारे में हमें जैन एवं बौद्ध दोनों स्रोतों से विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। ऋषिभाषित में जो स्पष्टतः एक प्राचीन ग्रन्थ है, रामपुत्त सम्बन्धी एक अलग अध्याय ही है।[१] रामपुत्त की जो शिक्षाएँ इसमें वर्णित हैं उससे रामपुत्त अपने समय के एक महान् चिन्तक ऋषि प्रतीत होते हैं। ऋषिभाषित के अतिरिक्त स्थानांग[२] एवं अनुत्तरोपपातिक[३] भी रामपुत्त का उल्लेख करते हैं। सूत्रकृतांग के अतिरिक्त स्थानांग की सूचना के अनुसार अन्तकृद्दशा की प्राचीन विषयवस्तु में एक रामपुत्त नामक अध्ययन था जो वर्तमान अन्तकृद्दशा में अनुपलब्ध है। सम्भवतः इस अध्ययन में रामगुप्त के जीवन एवं उपदेशों का संकलन रहा होगा।.....सूत्रकृतांग और ऋषिभाषित दोनों से ही यह सिद्ध हो जाता है कि रामपुत्त मूलतः निर्ग्रन्थ परम्परा के नहीं थे, फिर भी उसमें उन्हें सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त था।"[४]

अर्हत् रामपुत्त का वर्णन प्राचीनतम बौद्ध साहित्य में प्राप्त होता है। पालि साहित्य में रामपुत्त का पूरा नाम उद्दक रामपुत्त दिया गया है तथा यह बताया गया है कि रामपुत्त महात्मा बुद्ध से ज्येष्ठ थे।[५] सत्य ज्ञान की खोज में महात्मा बुद्ध जब गृह-त्याग करते हैं तो उनकी भेंट रामपुत्त से होती है। महात्मा बुद्ध रामपुत्त का शिष्य बनकर उनसे ध्यान की प्रक्रिया सीखते हैं। पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् बुद्ध रामपुत्त को अध्यात्म विद्या का सत्पात्र जानकर उन्हें उपदेश देना चाहते हैं परन्तु तब तक रामपुत्त की मृत्यु हो चुकी रहती है।

उपर्युक्त तथ्यों से यह भी स्पष्ट होता है कि रामपुत्त महावीर एवं बुद्ध के समकालीन एक ऐतिहासिक ऋषि थे जो ध्यान पद्धति की अपनी विशिष्ट प्रणाली के लिए प्रसिद्ध थे। दुर्भाग्यवश वैदिक साहित्य से हमें अभी तक रामपुत्त के बारे में कोई जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है।

बाहुक––सूत्रकृतांग में बाहुक का भी अर्हत् ऋषि के रूप में उल्लेख किया गया है। जैन, बौद्ध एवं वैदिक तीनों स्रोतों से हमें बाहुक के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

---

१. ऋषिभाषित, २३वाँ अध्याय

२. स्थानांग, ७५५

३. अनुत्तरोपपातिक, ३।६

४. ऋषिभाषित एक अध्ययन, पृ० ६१–६२ (लेखक–डॉ० सागरमल जैन, प्रका०–प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर, १९८८)

५. Dictionary of Pali Proper Names, Vol. I, PP. 382-83 (Ed. J. P. Malal Sekhar, 1937)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋषिभाषित के १४वें अध्याय में बाहुक के उपदेशों का संकलन है। ऋषिभाषित एवं सूत्रकृतांग के अतिरिक्त कालान्तर के ग्रन्थों–सूत्रकृतांग चूर्णि[१] एवं शीलांकाचार्य की सूत्रकृतांग वृत्ति[२] में भी बाहुक का उल्लेख प्राप्त होता है। इन सारे सन्दर्भों में बाहुक एक सम्मानित ऋषि के रूप में प्रस्तुत हैं। बाहुक की मूल शिक्षा जो हमें ऋषिभाषित में प्राप्त होती है, वह तृष्णा (भावना) एवं संसार के त्याग से सम्बन्धित है। बाहुक के अनुसार केवल वही व्यक्ति मोक्ष मार्ग की ओर निष्कंटक होकर प्रयाण कर सकता है जिसने अपनी तृष्णाओं को जीत लिया है इसके विपरीत तृष्णाओं से पराजित व्यक्ति नरकगामी बनता है। स्पष्टतः बाहुक अनासक्त भाव से किये हुए काम पर बल देते हैं और कहते हैं कि निष्कामभाव से किया हुआ कर्म ही मुक्तिपथगामी होता है।[३]

बौद्ध साक्ष्य बाहुक ऋषि का उल्लेख नहीं करते अपितु बाहिय दारुचीरिय नामक एक अर्हत् ऋषि का वर्णन अवश्य करते हैं।[४] अंगुत्तर निकाय में बाहिय का उल्लेख एक ऐसे ऋषि के रूप में किया गया है जो सत्य का सद्यः साक्षात्कार कर लेता है। बौद्ध साहित्य में इस बाहिय को महात्मा बुद्ध का शिष्य कहा गया है।

जहाँ तक वैदिक साहित्य में बाहुक के वर्णन का प्रश्न है, इसमें बाहुवृक्त नामक ऋषि का उल्लेख मिलता है।[५] ऋग्वेद के कुछ मन्त्र उनके द्वारा प्रस्फुटित बताए जाते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कोई सूचना हम बाहुक ऋषि के बारे में नहीं पाते, जिसकी समता हम जैन एवं बौद्ध ग्रन्थों में वर्णित बाहुक या बाहिय से कर सकें। महाभारत में एक बाहुक का नामोल्लेख अवश्य हुआ है, परन्तु एक योद्धा के रूप में। महाभारत के वनपर्व में[६] महाराजा नल को भी बाहुक कहा गया है जब वे छद्म वेश में अयोध्या नरेश रिपवर्ण के यहाँ थे। एक बाहुक नामधारी नाग का भी उल्लेख महाभारत[७] में प्राप्त होता है जो जन्मेजय के सर्पयज्ञ में दग्ध हो गया था। हम निश्चय ही बाहुक नामधारी इन पुरुषों का बाहुक ऋषि से सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सकते।

उपर्युक्त तथ्यों से यह सम्भावना प्रबल दिखाई पड़ती है कि सूत्रकृतांग एवं ऋषिभाषित में वर्णित बाहुक गौतम बुद्ध के शिष्य बाहिय ही हैं। ऋषिभाषित में स्वयं गौतम बुद्ध एवं उनके अनेक शिष्यों का वर्णन सम्मान के साथ किया गया है। बाहुक की जो शिक्षायें ऋषिभाषित में वर्णित हैं, वे बौद्ध धर्म की शिक्षाओं के अनुरूप हैं। बौद्ध धर्म में दुःखों का मूल कारण तृष्णा माना गया है और ऋषिभाषित में बाहुक तृष्णा के परिहार की ही बात

---

१. सूत्रकृतांगचूर्णि, पृ० १२१
२. सूत्रकृतांग शीलांक टीका, पृ० १५
३. इसिभासियाइं, पृ० २७
४. Pali Proper Names, Vol. II, PP. 281–83
५. महाभारत की नामानुक्रमणिका पृ० २१६
६. महाभारत, वनपर्व, ६६।२०
७. वही, आदिपर्व, १७३।१३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करते हैं। इच्छा का दमन तभी सम्भव है जब हम तृष्णा से मुक्त हों। ऋषिभाषित में बाहुक को इच्छा से रहित होने का उपदेश देते हुए प्रस्तुत किया गया है।[1]

नारायण – नमि, रामपुत्त एवं बाहुक के समान नारायण का भी उल्लेख एक अर्हत् ऋषि के रूप में सूत्रकृतांग में हुआ है। सूत्रकृतांग के समान ऋषिभाषित में भी उन्हें अत्यन्त सम्मान के साथ प्रस्तुत किया गया है।[2] ऋषिभाषित में नारायण की जो शिक्षाएँ संकलित हैं, वे मुख्यतः क्रोध के निरसन के सम्बन्ध में हैं। उपमाओं के माध्यम से क्रोध की भयावह प्रकृति को समझाने का प्रयास किया गया है। नारायण ऋषि के अनुसार अग्नि को शान्त किया जा सकता है, परन्तु क्रोध की अग्नि को शान्त करना असम्भव है। अग्नि तो केवल इसी जीवन को नष्ट करती है परन्तु क्रोध की अग्नि तो भविष्य के कई जन्मों को नष्ट कर देती है। अतः मोक्षाभिलाषी व्यक्ति को क्रोधाग्नि का निरसन करना चाहिए।

वैदिक साहित्य में नारायण का उल्लेख एक देव के रूप में हुआ है। महाभारत[3] में एक नारायण ऋषि का उल्लेख मिलता है जिन्होंने बद्रिकाश्रम में चार हजार वर्षों तक तपस्या की थी। महाभारत के शान्ति पर्व में भी नारायण का उल्लेख मिलता है। यहाँ ऋषि नारायण को देवल ऋषि के साथ आध्यात्मिक चर्चा करते हुए प्रस्तुत किया गया है।[4]

बौद्ध साहित्य में नारायण ऋषि का मुझे कोई उल्लेख नहीं प्राप्त हुआ।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि नारायण ऋषि वैदिक परम्परा के प्रतिनिधि थे जिनकी तपस्या के कारण विशेष ख्याति थी।

असित देवल –सूत्रकृतांग में उल्लिखित ऋषि असित देवल अपने समय के विख्यात ऋषि प्रतीत होते हैं। इनका उल्लेख जैन, बौद्ध एवं वैदिक तीनों परम्पराओं में विस्तार से प्राप्त होता है। सूत्रकृतांग में सिद्धि प्राप्त करने वाले ऋषियों में इनकी गणना की गई है, ऋषिभाषित भी इन्हें अर्हत् ऋषि कहकर विपुल सम्मान देता है।

ऋषिभाषित के तीसरे अध्याय में विस्तार से इनकी शिक्षाओं का वर्णन है।[5] असित देवल को सभी प्रकार की इच्छाओं, भावनाओं एवं राग के निरसन की शिक्षा देते हुए प्रस्तुत किया गया है। ये क्रोध एवं इच्छा को जीतने का उपदेश देते हैं क्योंकि इनको जीतकर ही कोई व्यक्ति मोक्षपथ की ओर प्रयाण कर सकता है। नारायण ऋषि के समान इनके भी उपदेश का सार यह है कि सामान्य अग्नि को तो शान्त किया जा सकता है परन्तु राग की अग्नि को शान्त करना अत्यन्त ही दुष्कर है।

---

१. अकामए कालगए, सिद्धि पत्ते अकामए
इसिभासियाइं, पृ० २७

२. वही, अध्याय ३६

३. महाभारत, वनपर्व, ७३।३३९

४. वही, शान्तिपर्व, ३३।१३–१५

५. इसिभासियाइं, तीसरा अध्याय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन परम्परा के समान बौद्ध परम्परा भी असित देवल से परिचित है। मज्झिम निकाय में अस्सलायण सुत्त नामक एक अलग सुत्त है[1] जिसमें आश्वलायन के उपदेशों को संकलित किया गया है। इस सुत्त में असित देवल को ब्राह्मणों के झूठे अहंकार से दूर होने का उपदेश देते हुए प्रस्तुत किया गया है। उनके उपदेश का मूल सार यह है कि कोई व्यक्ति जाति से नहीं अपितु कर्म से श्रेष्ठ होता है। इन्द्रिय जातक में भी असित देवल का उल्लेख है।[2] इस जातक में असित का नारद ऋषि के साथ वार्तालाप वर्णित है। इसमें यह उल्लेख है कि नारद एक गणिका के प्रेमजाल में फँस गये। इसी सम्बन्ध में असित देवल द्वारा नारद को प्रतिबोधित करने का उपदेश संकलित है।

वैदिक परम्परा में असित देवल एक महान् ऋषि के रूप में वर्णित हैं। महाभारत के आदि पर्व में इन्हें महान् तपस्वी कहा गया है।[3] इसी पर्व में महाज्ञानी, हर्ष एवं क्रोध से रहित जैगीषव्य मुनि से समता के विषय में असित देवल का वार्तालाप वर्णित है। जन्मेजय के सर्पसत्र में जिन ऋषियों एवं महात्माओं ने भाग लिया था, उनमें असित देवल का भी नाम आता है। महाभारत के अधिकांश स्थलों में असित देवल नारद के साथ उपस्थित हैं। राजा युधिष्ठिर के अभिषेक काल में भी ये नारद के साथ उपस्थित थे।[4] शान्ति पर्व में ऋषि नारद के साथ प्राणियों की उत्पत्ति एवं विनाश सम्बन्धी प्रश्न पर इनका वार्तालाप वर्णित है। ये नारद को उपदेश देते हुए कहते हैं कि पुण्य और पापों के क्षय के लिए ज्ञानयोग को साधन बनाना चाहिए।[5] महाभारत में असित देवल एक वृद्ध एवं बुद्धिमान् ऋषि के रूप में वर्णित हैं। जिस प्रकार सूत्रकृतांग में असित देवल को सचित्त जल एवं बीजों का सेवन करते हुए सिद्धि प्राप्त करने वाला कहा गया है, उसी प्रकार महाभारत में भी असित देवल को गृहस्थ धर्म का आश्रय लेकर तपस्या करने वाला कहा गया है।[6] असित देवल को धर्म-परायण, जितेन्द्रिय, महातपस्वी तथा सबके प्रति समान भाव रखने वाला कहा गया है।[7]

---

१. मज्झिम निकाय, २।५।३

२. Pali Proper Names, Vol. I, P. 210

३. महाभारत, आदिपर्व, १।१०७

४. महाभारत, सभापर्व ५३।१०

५. महाभारत, शान्तिपर्व, २७५।२

६. वही, शल्यपर्व, ५०।१

७. "धर्मनित्यः शुचिर्दान्तो न्यस्तदण्डो महातपाः।
कर्मणा मनसा वाचा समः सर्वेषु जन्तुषु॥
अक्रोधनो महाराज तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः।
प्रियाप्रिये तुल्यवृत्तिर्यभवत् समदर्शनः॥
काञ्चने लोष्ठभावे च समदर्शी महातपाः।
देवानपूजयन्नित्यमतिथीञ्च द्विजैः सह॥
ब्रह्मचर्यरतो नित्यं सदा धर्मपरायणाः—वही, शल्यपर्व ५०/२–५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीनों परंपराओं के साक्ष्यों को देखने से स्पष्ट होता है कि असित देवल एक महान् धर्मपरायण ऋषि थे। ये वैदिक परंपरा से सम्बन्धित किये जा सकते हैं क्योंकि सूत्रकृतांगकार इन्हें जैन परंपरा से भिन्न एक ऐसे ऋषि के रूप में प्रस्तुत करता है जिसने सचित्त जल आदि का सेवन करते हुए मोक्ष प्राप्त किया था। महाभारतकार भी असित देवल को गृहस्थ धर्म का पालन करने वाला महान् ऋषि बताता है। समत्वभाव संबन्धी इनके उपदेश भी दोनों परंपराओं में समान रूप से वर्णित हैं। इसके अतिरिक्त असित देवल का नारद के साथ संबन्ध वैदिक एवं बौद्ध दोनों परंपराओं में प्रायः समान है। तीनों परंपराओं में इनके विचारों की समानता इनकी ऐतिहासिक उपस्थिति को पुष्ट करती है।

द्वैपायण—जैन परंपरा में सूत्रकृतांग के अतिरिक्त अन्य ग्रंथों में भी द्वैपायण का उल्लेख मिलता है। ऋषिभाषित का ४० वाँ अध्याय द्वैपायण से संबन्धित है। इसके अतिरिक्त समवायांग,[1] औपपातिक[2] एवं अन्तकृद्दशा[3] में भी द्वैपायण की चर्चा है। समवायांग में द्वैपायण का उल्लेख भविष्य के तीर्थंकरों में है। औपपातिक में इनका उल्लेख परिव्राजक परंपरा के संस्थापक के रूप में हुआ है तो अन्तकृद्दशा में द्वारका नगर के विध्वंसक के रूप में। ऋषिभाषित में द्वैपायण को इच्छा-निरोध का उपदेश देते हुए प्रस्तुत किया गया है। इच्छा के कारण ही मनुष्य दुःखी होता है। इच्छा ही जीवन और मृत्यु का कारण है तथा सभी बुराइयों की जड़ है।[4] इच्छा रहित होना ही मोक्ष-पथ की ओर प्रथम कदम है—यह द्वैपायण की शिक्षा का मूल सार है।

जैन परंपरा के समान वैदिक परंपरा में भी द्वैपायण एक अत्यन्त प्रसिद्ध ऋषि के रूप में वर्णित हैं। महाभारत के आदि पर्व में इन्हें महर्षि पराशर का सत्यवती से उत्पन्न पुत्र कहा गया है।[5] द्वैपायण जिनका पूरा नाम कृष्ण द्वैपायण है, महाभारत के रचयिता कहे गये हैं। इसीलिये इन्हें सत्यवतीनन्दन व्यास भी कहा गया है।[6] महाभारत में मोक्षधर्म पर इनका विस्तृत उपदेश प्राप्त होता है। शान्तिपर्व में इनको काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय और स्वप्न को जीतने वाला कहा गया है।[7]

बौद्ध साहित्य भी ऋषि द्वैपायण से परिचित है। इनके नाम के समरूप एक कण्ह दीपायण जातक प्राप्त होता है परन्तु इस जातक का कथानक द्वैपायण सम्बन्धी जैन एवं वैदिक कथानक से भिन्न है। एक अन्य जातक में ऋषि द्वैपायण द्वारा द्वारका नगरी के नाश का उल्लेख है जिसके अनुसार द्वारका नगरी के विनाश के साथ ही वासुदेव वंश का भी नाश हो

---

१. समवायांग, सूत्र १५९
२. औपपातिक; सूत्र ३८
३. अन्तकृद्दशा, वर्ग २
४. इसिभासियाइं, ४०/१–४
५. "पराशरात्मजो विद्वान् ब्रह्मर्षि"
महाभारत, आदिपर्व, १।५५
६. वही, आदिपर्व, १।५४
७. वही, शान्तिपर्व, २४०।४-५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाता है।[1] जातक की यह कहानी कुछ भिन्नता के साथ महाभारत के मौसलपर्व में दी गई है।[2]

ऋषि द्वैपायण के द्वारा द्वारका एवं साथ ही वासुदेव वंश के नाश की कथा जैन, बौद्ध एवं वैदिक तीनों परम्पराओं में समान रूप से प्राप्त होती है। अतः इस घटना पर हम सन्देह व्यक्त नहीं कर सकते। महाभारत युद्ध के अंत में द्वारका एवं वासुदेव वंश के नाश का जो भी कारण रहा हो, ऋषि द्वैपायण की सहभागिता उसमें अवश्य रही होगी।

पाराशर—पूर्ववर्णित ऋषियों के समान ऋषि पाराशर भी जैन परम्परा से भिन्न ऋषि के रूप में सूत्रकृतांग में वर्णित हैं। परन्तु सूत्रकृतांग के अतिरिक्त अन्य किसी जैन ग्रन्थ में इनका उल्लेख प्राप्त नहीं होता।

बौद्ध साहित्य ऋषि पाराशर का वैदिक परम्परा के एक ऋषि के रूप में उल्लेख करते हैं जो इन्द्रियों के निरोध का उपदेश दिया करते थे। मज्झिमनिकाय के इन्द्रिय भावना नामक सुत्त में इनके उपदेशों का विस्तार से उल्लेख किया गया है। इस सुत्त में इन्हें **परासरीय** कहा गया है।[3] बौद्ध साहित्य एक और परासरीय नामक विद्वान् ब्राह्मण का उल्लेख करते हैं जो राजगृह का निवासी था तथा तीन वेदों में पारंगत था।[4] परासरीय द्वारा बौद्ध संघ में प्रवेश तथा अर्हत् पद प्राप्त करने का उल्लेख है।

वैदिक साहित्य में पाराशर के बारे में विस्तार से उल्लेख प्राप्त होता है। महाभारत में इन्हें महाभारत के रचयिता कृष्ण द्वैपायण का पिता कहा गया है।[5] महाभारत में इनके जो उपदेश संग्रहीत हैं, उनमें मुख्य रूप से इन्द्रिय संयम, क्षमा, धैर्य, सन्तोष आदि मानवीय गुणों के विकास पर बल दिया गया है। पराशर के अनुसार ये गुण ही मनुष्य की मोक्ष प्राप्ति में सहायक बनते हैं। शान्तिपर्व में इनके द्वारा दिया गया स्वकर्म का उपदेश अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण है। मनुष्य अपने ही कर्मों को भोगता है, दूसरे के कृत कर्मों को नहीं।[6]

हम देखते हैं कि जैन एवं बौद्ध दोनों साहित्य पराशर को वैदिक परम्परा से सम्बन्धित करते हैं। मज्झिम निकाय के इन्द्रिय भावना सुत्त एवं महाभारत में पाराशर के नाम से जो उपदेश संग्रहीत हैं, उनमें प्रायः समानता है। जैन, बौद्ध एवं वैदिक तीनों परम्पराएँ इनसे परिचित हैं। पाराशर वैदिक परम्परा के ऋषि प्रतीत होते हैं जो महाभारत काल के आस-पास रहे होंगे।

सूत्रकृतांग में वर्णित ऋषियों की पहचान करने का हमने यथासम्भव प्रयास किया। सूत्रकृतांग में जिस प्रकार इन ऋषियों का वर्णन है, उनसे स्पष्ट है कि ये जैनेतर परम्परा से

---

१. Pali Proper Names, Vol. I, P. 501
२. महाभारत, मौसलपर्व, १।१९–२१
३. मज्झिम निकाय, ३।५।१०, पृ० ६०९
४. Pali Proper Names, Vol. II, P. 190
५. महाभारत, आदिपर्व, १।५५, ६३।८४
६. वही, शान्तिपर्व, २९०।२०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्बन्धित थे। इन ऋषियों के उपदेश एवं विचार इतने लोकप्रिय थे कि सूत्रकृतांगकार को उनका उदाहरण देना पड़ा। इन ऋषियों को अपनी आलोचना का पात्र बनाकर भी उनको महर्षि एवं सिद्धि प्राप्तकर्ता कहकर उनकी महानता का सम्मान किया गया है। सूत्रकृतांग में तो साम्प्रदायिक अभिनिवेश के दर्शन होते हैं, परन्तु इस ग्रंथ से भी प्राचीन ग्रंथ ऋषि-भाषित में इन ऋषियों को अत्यन्त सम्मान के साथ श्रद्धासुमन समर्पित किये गये हैं। यहाँ साम्प्रदायिकता की गन्ध भी नहीं है। जैन परम्परा के समान बौद्ध एवं वैदिक परम्परा के प्राचीनतम साहित्य में इनके नामों का होना इनकी ऐतिहासिकता को स्वयं प्रमाणित करता है।

ऐतिहासिक तथ्यों के निर्धारण में नितान्त वस्तुपरक दृष्टिकोण सम्भव नहीं है क्योंकि वैज्ञानिक उपकरणों की भाँति हम इन्हें प्रयोगशाला में सिद्ध नहीं कर सकते। सम्राटों की भाँति इन ऋषियों की कोई राजचिह्नांकित मुद्रा या अभिलेख भी प्राप्त नहीं होते जिससे इनकी ऐतिहासिकता निर्विवाद रूप से प्रमाणित की जा सके। इनकी ऐतिहासिकता को सिद्ध करने के लिए हमारे पास केवल साहित्यिक स्रोत ही उपलब्ध हैं। विभिन्न परम्पराओं के विभिन्न ग्रंथ जब किसी व्यक्ति या घटना पर एक दृष्टिकोण या लगभग समान दृष्टिकोण रखें तो हमें उस व्यक्ति या घटना की ऐतिहासिकता पर विश्वास करना चाहिए क्योंकि उसकी प्रामाणिकता विभिन्न परम्पराओं के साक्ष्य स्वयं करते हैं।

सूत्रकृतांग में वर्णित ऋषियों के सम्बन्ध में हम देखते हैं कि सैद्धान्तिक (धार्मिक) ग्रंथ ऋषियों के उपदेशों एवं विचारों के बारे में समान दृष्टिकोण रखते हैं। उदाहरणस्वरूप, अर्हत् रामपुत्त का जो वर्णन हमें सूत्रकृतांग एवं ऋषिभाषित में प्राप्त होता है प्रायः वही वर्णन बौद्ध ग्रन्थों में भी है। दोनों ही परम्पराएँ उन्हें ध्यान एवं समाधि के क्षेत्र में अग्रणी मानती हैं। इसी प्रकार अर्हद् असित देवल सम्बन्धी विवरण तीनों परम्पराओं में प्रायः समान है तथा तीनों ही परम्पराएँ उन्हें ऋषि नारद से सम्बन्धित करती हैं। ऋषि द्वैपायण के सम्बन्ध में जैन, बौद्ध एवं वैदिक परम्परा के ग्रन्थ समान दृष्टिकोण रखते हैं--ये उदाहरण यह सिद्ध करते हैं कि इन ऋषियों का ऐतिहासिक अस्तित्व था। अपनी महानता अपने विचारों की उदात्तता के कारण ही ये तीनों परम्पराओं में मान्य हुए। यद्यपि हम इनके तिथि क्रम का निर्धारण नहीं कर सकते परन्तु यह अवश्य कह सकते हैं कि इन ऋषियों का अस्तित्व महावीर एवं बुद्ध के पूर्व या समकालीन अवश्य रहा होगा।

प्रवक्ता, प्राचीन इतिहास
श्री बजरंग महाविद्यालय
सिकन्दरपुर, बलिया उ०प्र०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org